12

ISSN No. : 2395-4000

प्रयास-पथ

रांगेय राघव

गीतकार शैलेन्द्र गायक मुकेश

विशेष

सिनेमा के इतिहास और वर्तमान को समेटती एक अनुपम कृति

पवन कुमार

सिनेमा हमारे देश में मात्र मनोरंजन का मुख्य साधन ही नहीं है बल्कि यह पौराणिक, धार्मिक, सामाजिक, आदर्शवादी और यथार्थपरक संदेशों को आम जन तक पहुंचाने का बहुत प्रभावी माध्यम है। इन विषयों पर विभिन्न कालखण्डों में फिल्मकारों ने फिल्में बनाकर समाज को हमेशा दिशा देने और मनोरंजन परोसने का प्रयास किया है। आरम्भ में फिल्म और फिल्मकारों पर अत्यल्प मात्रा में लेखन किया जाता था। सम्भवतः इसका कारण यह माना जाता था कि फिल्म और फिल्मकारों पर लेखन अपेक्षित रूप से गंभीर नहीं होता। कालान्तर में यह प्रवृत्ति साहित्य में सकारात्मक रूप से ग्रहण की जाने लगी और साहित्य में सिनेमा लेखन को सहज रूप से स्वीकार किया जाने लगा। वर्तमान परिदृश्य में सिनेमा आधारित लेखन को साहित्य में अब पर्याप्त महत्व मिलने लगा है।

बीते समय में कई लेखकों ने सिनेमा पर महत्वपूर्ण शोधपरक साहित्य लिखा है। इस कड़ी में हाल ही में अनामिका, प्रकाशन प्रयागराज से प्रकाशित 'भारतीय सिनेमा' को एक मत्वपूर्ण कड़ी के रूप में जोड़ा जा सकता है, जिसके लेखक महेन्द्र मिश्र इससे पूर्व भी बहुआयामी लेखन करते रहे हैं। 'भारतीय सिनेमा' अपने आप में एक शोधपरक विस्तृत दस्तावेज है। लेखक ने 'भारतीय सिनेमा' में न केवल हिन्दी बल्कि बांग्ला, तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़, उड़िया, भोजपुरी, गुजराती, पंजाबी, मराठी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में बनने वाली फिल्मों और फिल्मकारों पर विस्तार से लेखन किया है। इस विस्तृत दस्तावेज के माध्यम से पाठकों को भारतीय सिनेमा को समग्र रूप से समझने में सहायता

मिलती है।

यह पुस्तक न केवल सिनेमा में सामान्य रूप से रुचि रखने वाले सिनेप्रेमियों को जानकारी प्रदान करती है, बल्कि सिनेमा के गंभीर अध्येताओं और शोधार्थियों को प्रामाणिक और शोधपरक सामग्री उपलब्ध कराती है।

लेखक ने अपनी कृति में भारतीय सिनेमा के निर्माण पर दशकवार विश्लेषण किया है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो भारत में सिनेमा का प्रारम्भ 1895 में लंदन में प्रदर्शित हुए लूमियेर के चलचित्र से माना जा सकता है। 1896 में लूमियेर की फिल्में बम्बई में प्रदर्शित हुई। प्रोफेसर स्टीवेन्सन ने 1897 में कलकत्ता के स्टार थियेटर में फिल्म का प्रदर्शन आयोजित किया। उस प्रदर्शन के कुछ दृश्यों के आधार पर एक भारतीय फोटोग्राफर हीरालाल सेन ने 1898 में पहली मूल फिल्म फ्लावर ऑफ परशिया बनाई। 1899 में बम्बई के हैंगिंग गार्डन में हरिश्चन्द्र सखाराम भाटवडेकर ने, जो सावेदादा के नाम से मशहूर थे, दो मशहूर पहलवानों- पुण्डलीकदास और कृष्ण नाहवी की कुश्ती पर अपनी फिल्म 'दि रेसलर्स' का प्रदर्शन किया। किसी भारतीय द्वारा बनाई जाने वाली यह पहली फिल्म थी। इसे हम पहला वृत्तचित्र भी कह सकते हैं। 18 मई 1912 वह दिन था जब भारत की पहली मूक फिल्म श्री पुण्डलीक कोरोनेशन सिनेमेटोग्राफ मुम्बई में रिलीज हुई। यह फिल्म दादा साहिब तोर्बे ने बनाई थी। भारत का पहला पूर्ण कथानक वाला चलचित्र था राजा हरिश्चन्द्र। निर्माता, निर्देशक थे धुंदीराज गोविन्द फाल्के- दादा साहेब फाल्के। दादा साहेब फाल्के भारतीय फिल्म उद्योग के पुरोधा-प्रवर्तक माने जाते हैं। इस फिल्म के निर्माण और प्रदर्शन ने भारतीय सिनेमा का मार्ग प्रशस्त किया।

राजा हरिश्चन्द्र ने जिस विधा का सूत्रपात किया वह आज भी चल रही है और इक्कीसवीं सदी में भी, पौराणिक, ऐतिहासिक और लोक प्रसिद्ध प्रेमकथाओं पर फिल्में और टेलीविजन के धारावाहिक बन रहे हैं। राजा हरिश्चन्द्र के माध्यम से उदीयमान भारतीय सिनेमा को मौलिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी हासिल हुई। राष्ट्रवादी सांस्कृतिक नवोन्मेष की अभिव्यक्ति के रूप में राजा हरिश्चन्द्र और उसकी अनुगामी फिल्में उन्नीसवीं सदी के अन्त और बीसवीं सदी के उदयकाल में नई चिन्ताधारा और उपनिवेशवाद विरोधी आन्दोलन का हिस्सा बन गई। तत्कालीन फिल्म निर्माण पर यदि दृष्टिपात किया जाये तो ज्ञात होता है कि राजा हरिश्चन्द्र के पश्चात् दादा साहेब ने भष्मासुरमोहिनी, लंकादहन, कालियामर्दन और भक्त प्रहलाद जैसी फिल्में बनायीं। 1918 में उन्होंने फाल्के एण्ड कम्पनी स्थापित की। 1920 के पश्चात् फिल्म निर्माण एक महत्वपूर्ण उद्योग के रूप में करवट लेने लगा और बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में फिल्म स्टूडियो बनने लगे। बाबूराव पेंटर, मणिलाल जोशी, प्रियनाथ गांगुली, चन्दूलाल शाह जैसे नए फिल्म निर्माता-निर्देशक सामने आये। 1930 के दशक में सवाक् चलचित्र का आगमन एक क्रान्तिकारी परिवर्तन था।

1931 से लेकर 1934 तक मूक सिनेमा का दौर चलता रहा। कलकत्ता का एलफिन्स्टन पैलेस पूरब की दुनिया में पहला थियेटर था जो ध्वनि प्रसारण के उपस्कर से पूर्णरूप से लैस था। भारत पर इसका प्रभाव गम्भीर और दूरगामी था। ध्वनि की सम्भावनायें एक रहस्य के उद्घाटन के

समान थीं, उसने सिनेमा के उदीयमान स्वरूप के लिये नये क्षितिजों के द्वार खोल दिये थे। इन उद्घाटित तथ्यों को उकेरती हुई पर्दे पर भारत की पहली बोलती फिल्म 'आलमआरा' रिलीज हुई। भारतीय सिनेमा के लिये यह गौरव की बात है कि अमेरिका में पहली सवाक् फिल्म के प्रदर्शन के चार साल बाद ही टॉकी-फिल्म इस देश में बनी। इस फिल्म के निर्माण के पश्चात् देश में न केवल सवाक् फिल्मों के निर्माण की परम्परा शुरू हुयी बल्कि अधुनातन तकनीकी से लैस फिल्मों का भी सफर तय किया गया। ये सारे तथ्य लेखक महेन्द्र मिश्र ने अपने फिल्मकोश 'भारतीय सिनेमा' में सिलसिलेवार उद्घाटित किये हैं।

इस फिल्मकोश में लेखक ने दशकवार फिल्मों की व्याख्या की है। इस व्याख्या में लेखक ने फिल्मों की कहानी उनके निर्देशक और फिल्मों से जुड़ी हुयी रोचक बातों का समावेश किया है। लेखक ने पहले खण्ड में हिन्दी फिल्मों के विषय में लिखते हुए आलमआरा (1931) से लेकर लंचबॉक्स (2013) तक बनी तकरीबन समस्त महत्वपूर्ण फिल्मों के विषय में लेखक ने सारगर्भित तरीके से टिप्पणियां प्रस्तुत की हैं। मूक फिल्मों से लेकर सवाक् फिल्मों तथा श्वेत-श्याम फिल्मों से लेकर आधुनिक तकनीकों से युक्त फिल्मों के अत्यन्त दुर्लभ चित्रों के साथ की गयी यह प्रस्तुति वास्तव में प्रसंशनीय है।

लेखक ने इस कृति में हिन्दी सिनेमा के समान्तर एवं मध्यमार्गी विषय में अलग से एक अध्याय लिखा है। इस अध्याय के माध्यम से लेखक ने सिनेमा के गंभीर रूप को भी उद्घाटित करने का काम किया है। उन्होंने इस अध्याय में नीचा नगर, धरती के लाल, दो बीघा जमीन, अछूत कन्या, मन्थन, आक्रोश, पार, मिर्च-मसाला, मृगया, कथा, जाने भी दो यारों पर विमर्श करने के साथ-साथ ही इस धारा के प्रवर्तक सत्यजीत रॉय, ऋत्विक घटक, मृणाल सेन, श्याम बेनेगल, अपर्णा सेन, कुमार साहनी, बासु चटर्जी, बिमल रॉय, गुरूदत्त, हृषिकेश मुखर्जी, गुलज़ार आदि के सिनेमाई कृतित्व पर भी लेखक ने विस्तार से प्रकाश डाला है। इस श्रृंखला को आगे बढ़ाने वाले कतिपय फिल्मकारों में कुमार साहनी, मणिकौल, सईद मिर्जा, केतन मेहता, प्रकाश झा, कुन्दन शाह, महेश भट्ट, शेखर कपूर, सुधीर मिश्रा, मुजफ्फरअली, सई परांजपे, कल्पना लाजमी, मीरा नायर और दीपा मेहता रहे हैं। लेखन ने इन फिल्मकारों के विषय में विस्तारपूर्वक लिखने में कोई कोताही नहीं की है।

इस कृति की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि लेखक ने भारतीय सिनेमा को एक समग्र रूप से देखने और समझने का प्रयास किया है। उसका ध्यान मात्र हिन्दी भाषी सिनेमा तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसकी दृष्टि में भारतीय सिनेमा तब तक अधूरा है, जब तक कि उसमें बांग्ला, दक्षिण भारतीय भाषाएं, क्षेत्रीय भाषाएं, जनजातीय भाषाओं के सिनेमा की बात न की जाए। अपनी कृति को भारतीय सिनेमा समग्र के रूप में स्थापित करने के क्रम में लेखक ने बांग्ला सिनेमा पर विस्तृत प्रकाश डाला है। अमूमन ऐसा कम होता है कि जब कोई हिन्दी भाषी लेखक सिनेमा पर लेखन करता है तो उसका मुख्य ध्यान हिन्दी सिनेमा पर ही रहता है, अन्य भाषायी सिनेमा उसकी दृष्टि से छूट जाते हैं। लेखक श्री महेन्द्र मिश्र ने यहां अपनी लेखकीय कुशलता का बेहतरीन परिचय दिया है।

लेखक ने बांग्ला सिनेमा की महत्ता को बेहतर तरीके से समझते हुए पूरा एक खण्ड बांग्ला सिनेमा पर समर्पित किया है। इस खण्ड में लेखक ने बताया है कि कलकत्ता में सिनेमा का जन्म बम्बई के साथ ही हुआ। लेखक रोचक बातों का विवरण देते हुए बताता है कि हीरालाल सेन बंगाली सिनेमा के संस्थापक माने जाते हैं। सामान्य पाठक व जिज्ञासुओं को वे बताते हैं कि सेन ने फिल्मों के अलावा कुछ विज्ञापन फिल्में भी बनायीं। मूक सिनेमा के जमाने में भी बांग्ला में फिल्में बनती रहीं। जमाई षष्ठी (1931) पहली बांग्ला सवाक फिल्म मानी जाती है। 40' के दशक में बांग्ला फिल्मों में सामाजिक विषमता, वर्ग विभेद और राजनैतिक संघर्ष से संबंधित फिल्मों का निर्माण हुआ। आरम्भ से ही बांग्ला फिल्में आम हिन्दी मसाला फिल्मों से अलग हटकर गंभीर सिनेमा को प्रदर्शित करती रहीं। बांग्ला फिल्मों में शहरी मध्यवर्ग के पारिवारिक विषय और आदर्श, कलकत्ता महानगर का जीवन, बचपन की यादें और अधूरे प्रेम की कथायें फिल्मों का विषयवस्तु बनीं।

50' के दशक से ही सत्यजित राय, ऋत्विक घटक और मृणाल सेन के अलावा कतिपय अन्य फिल्मकारों ने बांग्ला सिनेमा को श्रेष्ठ अस्मिता प्रदान की। लेखक स्पष्ट करता है कि बांग्ला सिनेमा की खासियत यह है कि उसमें शुरू से ही प्रयोगधर्मिता और प्रस्तुति की नई विधाओं की प्रधानता रही। लेखक ने इस कृति में तपन सिन्हा, राजेन तरफदार, सुखेनदास, अन्जन चौधरी, तरूण मजूमदार, निर्मल डे, अजय कर, नवेन्दु चटर्जी, सैकत भट्टाचार्य, राजा मित्रा, मलय भट्टाचार्य पर भी शोधपरक सामग्री प्रस्तुत की है। सत्यजीत राय के सिनेमा संसार पर तो लेखक ने विस्तृत लेखन किया है। लेखक ने राय की प्रत्येक फिल्म के विषय में उन्होंने विषयवस्तु, कला, कथा-पटकथा आदि पर सूक्ष्मता से प्रकाश डाला है। ऋत्विक घटक तथा मृणाल सेन पर भी लेखक ने विस्तारपूर्वक लेखन किया है। लेखक ने अपर्णा सेन, उत्पलेन्दु चक्रवर्ती, बुद्धदेवदास गुप्ता, गौतम घोष, रितुपर्णा घोष जैसे नामचीन फिल्मकारों पर तो लिखा ही है अदिति राय जैसे उदीयमान निर्देशक पर भी उन्होंने उदारतापूर्वक लेखन किया है। लेखक श्री महेन्द्र मिश्र ने बांग्ला सिनेमा के प्रत्येक पहलू को स्पर्श करने का प्रयास किया है।

भारतीय सिनेमा, दक्षिण भारतीय भाषायी सिनेमा का उल्लेख किये बिना अपूर्ण ही रहेगा। लेखक ने दक्षिण भारतीय भाषायी सिनेमा पर भी भाषावार वर्णन किया है। स्वीकार्य तथ्य है कि दक्षिण भारतीय भाषाओं में सिनेमा मनोरंजन की अत्यन्त लोकप्रिय विधा रही है। लेखक ने तमिल, तेलुगू, मलयालम तथा कन्नड़ भाषी सिनेमा पर विस्तारपूर्वक लेखन किया है। लेखक ने इन भाषाओं के सिनेमा की मूलभूत विशेषताओं को पाठकों के सामने लाते हुए सिनेमा से जुड़े हुए महत्वपूर्ण निर्माता-निर्देशक, महत्वपूर्ण फिल्मों और फिल्म निर्माण के ट्रेन्ड के विषय में गहराई से लिखा है। लेखक ने तमिल सिनेमा के कलाकारों के राजनीति प्रेम पर भी निष्पक्षता से लिखा है। सत्य तो यह है कि तमिल सिनेमा के स्थानीय राजनीति पर प्रभाव और उसकी व्यापकता की बात किये बिना तमिल सिनेमा की डिटेलिंग अधूरी ही रह जायेगी। हमारे सामने इस बात के उदाहरण उपलब्ध हैं कि तमिल सिनेमा के नायक-नायिकाओं ने किस प्रकार तमिल राजनीति को न केवल प्रभावित किया बल्कि किस प्रकार अपनी भूमिका बतौर निर्णायक स्थापित कर ली। 1950 से आज तक तमिल सिनेमा और राजनीति का संबंध

अविच्छिन्न है। लेखक ने इस विषय पर बहुत ही प्रासंगिक व घटनापरक विश्लेषण किया है।

इस कृति का खण्ड-तीन अन्य भारतीय भाषाओं का सिनेमा से संबंधित है। इस खण्ड के आरम्भ में लेखक ने असमिया सिनेमा तथा इसकी भाषायी पृष्ठभूमि पर गहनता से लिखा है। असमिया सिनेमा के दो महत्वपूर्ण फिल्मकार भबेन्द्र नाथ सैकिया तथा जहनु बरूआ के विषय में लेखक ने लिखने के साथ ही 2013 तक महत्वपूर्ण असमिया फिल्मों के विषय में भी लेखन कार्य किया है। लेखक ने भारत के उत्तर पूर्वी भाग के सिनेमा के विषय में भी लेखन किया है। वास्तव में उत्तर-पूर्व के सिनेमा की जानकारी इस क्षेत्र के बाहर, लगभग नहीं के बराबर है। फिल्मोत्सवों को छोड़कर प्रथम श्रेणी की असमिया फिल्मों का प्रदर्शन भी अमूमन नहीं होता।

महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि असम के अतिरिक्त मणिपुर में भी फिल्मकार सक्रिय हैं। लेखक ने मणिपुर की प्रधान भाषा मीती के अतिरिक्त कर्वी, बोडो, खासी, नागा, कोकबरोक जैसी जनजातीय भाषाओं में बनायी गयी फिल्मों के बारे में भी रोचक तरीके से टिप्पणियां प्रस्तुत की हैं। अन्य क्षेत्रीय भाषाओं की फिल्मों में लेखक ने ओडिया, भोजपुरी, मराठी, गुजराती, छत्तीसगढ़ी, पंजाबी और हरियाणवी भाषाओं की फिल्मों पर गहनता से टिप्पणियां की हैं तथा प्रमुख फिल्मों के साथ-साथ उनसे जुड़े हुए रोचक प्रसंगों का भी आवश्यकतानुसार उल्लेख किया है।

बहरहाल यह पुस्तक देश की सभी भाषाओं और क्षेत्रों की फिल्मों को समग्र रूप में प्रस्तुत करने की एक कोशिश है। इस कृति को फिल्मकोश का दर्जा दिया जा सकता है। इस पुस्तक में, इतिहास के परिप्रेक्ष्य में, विषय के अनुरूप ऐसी फिल्मों के विषय में विस्तारपूर्वक लिखा गया हैं जो किसी काल, प्रवृत्ति या शैली का प्रतिनिधित्व करती हैं अथवा स्वयं में कालजयी कृतियाँ हैं। इस कोश में हिन्दी, तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़, बांग्ला, असमिया, मराठी और ओडिया के साथ कई आंचलिक और जनजातीय भाषाओं को शामिल किया गया है।

पुस्तक, भारतीय सिनेमा को बेहतर ढंग से समझने का मार्ग प्रशस्त करती है तथा एक ऐसी जगह को भरती है जो अब तक खाली थी। यह कृति शोधार्थियों के लिए भी किसी फिल्मकोश से कम नहीं है। त्रुटिरहित मुद्रण, सुन्दर आवरण इस फिल्मकोश को और भी आकर्षक बनाते हैं। यह फिल्मकोश किसी भी सिनेप्रेमी के लिए अपरिहार्य कृति सिद्ध होगी। 'भारतीय सिनेमा' सिनेप्रेमी पाठकों को निश्चित रूप से पसन्द आयेगी।

भारतीय सिनेमा/महेन्द्र मिश्र/अनामिका प्रकाशन, प्रयागराज/रु. 2495.00

ए-753 इन्दिरा नगर, लखनऊ, 226016, मो. नं.- 9412290079